संपादकीय

निजता का परिक्षेत्र

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने ताजा फैसले में नागरिकों की निजता यानी प्राइवेसी को मौलिक अधिकार मानते हुए इसे संविधान के अनुच्छेद २१ में उल्लिखित व्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार में सन्निहित माना है, किंतु वैयक्तिकता, निजता, अंतरंगता को पर्दे में रखने की परंपरा चिरकालिक है। इसे किसी नियम-कानून से अधिक व्यावहारिकता, नैतिकता और वैयक्तिकता की व्यापक स्वीकृति हासिल है। यह सदैव से निजी रुचि-संवेदना तथा बुद्धि-विवेक का क्षेत्र रहा है। आम तौर पर जिसके अस्तित्व के बारे में सबको पता होता है, पर उसे सार्वजनिक नहीं किया जाता, वह निजता है। वह गलत नहीं होता, बिल्कुल सही होता हैं, पर उसे प्रदर्शित करना अनैतिक, अश्लील, अमानवीय माना जाता है। इस प्रकार निजता गलत कृत्यों से भिन्न ठहरती है। व्यक्ति अपने दुराचार, भ्रष्टाचार आदि को भी पर्दे में रखता है। इसके बारे में पता चलने पर 'कानून' के अनुसार कार्रवाई सुनिश्चित होती है। बेशक, जरूरी नहीं कि यह कानून सदैव संवैधानिक ही हो। यह पारिवारिक, जातीय, पंचायती या साम्प्रदायिक भी हो सकता है। बहरहाल, जैसे बहुत सारे हाव-भाव व वस्तु-कार्य सामूहिक रूप में ही शोभते हैं, वैसे ही कुछ चीजें निजी ही ठीक लगती हैं। जिस प्रकार पार्टी, प्रीतिभोज, सभा, भाषण वैयक्तिक नहीं होते, उसी प्रकार अंतर्संलाप, निजी बातचीत, कामक्रीड़ा, गर्भधारण, प्रजनन सहित अन्य अंतरंग भाव, विचार, कार्य कभी निर्वैयक्तिक नहीं होते। ये सार्वजनिक, सामूहिक स्तर पर संपन्न हो भी नहीं सकते। ऐसी चीजें चाहे सही हों या गलत, नैतिक हों या अनैतिक, कभी जनसंचार माध्यमों द्वारा सीधे नहीं दिखाई जातीं, सूच्य होने की स्थिति में केवल सूचित की जाती हैं। अत्याधुनिक समाज में पोर्न फिल्म के बड़े से बड़े आशिक भी ऐसे कितने हैं जो सपरिवार या समाज में एकसाथ बैठकर उसे देख सकते हों। निजी जीवन-व्यवहार के कुछएक पहलू ऐसे हैं, जो सार्वजनिक हो जाने मात्र से बदरूप हो जाते हैं, अश्लीलता और फूहड़पन के सूचक बन जाते है।

मजबूरीवश, शौक से या आस्था-परंपरा के कारण निजता की श्रेणी में आने वाला कार्य जब कभी सार्वजनिक रूप में संपन्न होता है, तो उसे करने के तौर-तरीके बदल जाते हैं। घर के बाथरूम में जैसे नहाया जाता है, वैसे ही सार्वजनिक स्थल पर नहीं नहाया जाता; घर-परिवार में जैसा साधारण भोजन किया जाता है, वैसा ही पार्टी या भोज में नहीं खाया-खिलाया जाता। घर में लोग जैसे कपड़े पहनते हैं, वैसे ही बाहर ऑफिस, बाजार, सभा-सोसाइटी में नहीं पहनते। नितांत निजी क्षणों जैसे बातचीत करते हैं, वैसे ही सार्वजनिक स्तर पर व्याख्यान, भाषण, प्रवचन नहीं करते। बेडरूम में जैसे सोते हैं, वैसे ही डॉर्मिटरी में नहीं सो सकते। सामूहिक स्तर पर अनुशासित, औपचारिक होना पड़ता है, बनावटी होने का स्वांग रचना पड़ता है, जबकि निजी जीवन में स्वाभाविकता, व्यावहारिकता, सहजता व सरलता होती है। निजी जीवन में लोग अधिक खुले होते हैं। निजी जीवन की अपनी सुविधा है और सार्वजनिक जीवन की अपनी मर्यादा। हो सकता है कि किसी के यहाँ निजी और सार्वजनिक के बीच का अंतर अत्यल्प हो, तो किसी के यहाँ अधिक, पर दोनों में पार्थक्य न हो - ऐसा संभव नहीं है। यदि सार्वजनिक की तरह निजी जीवन जीने का यत्न किया जाए तो जीना दूभर बन जाएगा। उदाहरणस्वरूप, जन्म तिथि के सबूत के लिए मैट्रिक का प्रमाणपत्र सर्वमान्य है। लेकिन पहले ज्यादातर लोगों की, जिनमें नामीगिरामी हस्तियाँ भी शामिल हैं, उनकी वास्तविक जन्म तिथि कुछ और होती थी और प्रमाण पत्र में कुछ और दर्ज होता था। तब बहुतों को अपने सही जन्मदिन का पता नहीं रहता था और स्कूलों में जन्म तिथि अंकित कराने के लिए जन्म प्रमाण पत्र की जरूरत भी नहीं पड़ती थी। क्या इस आधार पर जन्म दिन मनाने और प्रमाण पत्र पर प्रश्नचिन्ह खड़ा किया जा सकता है?

ऐसा नहीं कि निजता और सार्वजनिकता में अभेद स्थापित की जरूरत व्यक्त नहीं की गई है। इनके बीच के अंतर को पाटने का बौद्धिक अभियान जब-तब चला है, खासकर आधुनिकतावादियों के एक वर्ग-विशेष द्वारा, जिसका मानना है कि ''सार्वजनिक-निजी के भेद को पश्चिमी दर्शन में मुख्यधारा का स्थान प्राप्त है। परंपरागत राजनीतिक सिंद्धातों ने मानव अस्तित्व के निजी और सार्वजनिक दायरों के बीच हमेशा फर्क किया है। यौनिकता, बच्चा पैदा करना और बच्चों का पालन-पोषण 'निजी' दायरे मे आते हैं, क्योंकि इन कामों को प्राकृतिक माना जाता है। इसलिए इस दृष्टिकोण के अनुसार परिवार जैसी संस्थाओं को राज्य हस्तक्षेप के कार्यक्षेत्र से बाहर माना जाता है। नारीवादी इस समझ पर सवाल खड़ा करते हुए तर्क देती हैं कि मूलतः परिवार ही वह स्थान है जहाँ स्त्री का उत्पीड़न सबसे अधिक होता है। सार्वजनिक निजी विभाजन को स्वीकार करने के कारण समाज को उत्पीड़न करने की वैधता मिल जाती है। इसलिए यह आवश्यक है कि निजी क्षेत्र को भी न्याय, समानता और स्वतंत्रता के उन्हीं मूल्यों की कसौटी पर कसा जाना चाहिए, जिन्हें सार्वजनिक दायरे में लागू किया जाता है।'' (नारीवादी राजनीति : संघर्ष एवं मुद्दे : संपादक - साधना आर्य, निवेदिता मेनन, जिनी लोकनीता, पृष्ठ-50)। इतना ही नहीं, ''यौनिकता और जेंडर दोनों निजी जीवन ही नहीं, बल्कि समूचे सामाजिक जीवन का सरोकार बनते हैं। इस महत्त्वपूर्ण बिंदु पर रोशनी डालने में रेडिकल नारीवाद के अहम योगदान को स्वीकारना ही पड़ेगा। 'व्यक्तिगत ही राजनीतिक है' - यह रेडिकल नारीवाद का सबसे महत्त्वपूर्ण नारा रहा है। यह नारा घर के अंदर और घर के बाहर की संरचना में निहित जेंडर उत्पीड़न के अंतर्संबंध की पड़ताल करता है। यह इस बात को समझने में भी हमारी मदद करता है कि राज्य नियंत्रण के दायरे को बढ़ाने का उदारवादी नारीवादी प्रस्ताव किसी तरह नारी समस्या का समाधान नहीं है। यह भी संभव है कि राज्य के दायरे को बढ़ाने का मतलब होगा कि महिलाओं के जीवन में नए रूपों में पुरुषसता या जेंडर असमानता की ही वापसी।'' (वही, पृष्ठ-45)। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की निजता का दायरा ज्यादा गहरा और व्यापक माना जाता है, उसकी निजता-अंतरंगता को बेपर्दा करना ज्यादा संगीन मामला बनता है, हालाँकि इसका अर्थ यह नहीं कि औरत की निजता निजता होती है और मर्द की निजता कुछ और; किंतु दोनों की निजता में कुछ फर्क तो होता ही है। परंपरागत कहावत है कि 'औरत का नहाना और मर्द का खाना' नहीं दिखना चाहिए; अर्थात् न इन्हें देखने की कोशिश करनी चाहिए और न ही दिखाने का यत्न करना चाहिए। अपनी-अपनी निजता पर स्त्री-पुरुष दोनों का समान अधिकार है और एक दूसरे की निजता की रक्षा का दायित्व भी अन्योन्याश्रित है। आजकल नाबालिग पत्नी से शारीरिक संबंध को वैवाहिक बलात्कार की श्रेणी में रखने-न रखने को लेकर मामला दिल्ली उच्च न्यायालय में चल रहा है, परंतु जब तक 'नाबालिग पति-पत्नी' का अस्तित्व बरकरार है, तब तक उनके बीच के शारीरिक संबंध को दुष्कर्म कैसे कहा जा सकता है? बाल विवाह पूर्णरूपेण रोकना ही इसका एकमात्र समाधान है, जिसके लिए कानून पहले से है ही, सिर्फ शत प्रतिशत लागू करना है। दंपती को यौन संबंध, गर्भधारण कब-कैसे करना है - यह कोई दूसरा या राज्य तय नहीं कर सकता। जहाँ तक अवैध गर्भ के गर्भपात की बात है तो वह वैध तरीके से हो ही नहीं सकता, अवैध तरीके से ही होता है। सरकार इस दिशा में दूर से कवर करने वाला सामान्य-सा नियम बना सकती है और बनाती है।

महिला हो या पुरुष, किसी की भी निजता में हस्तक्षेप नागरिक स्वतंत्रता का हनन है। स्वानुशासित निजता के प्रति स्वयं चौकस रहना जरूरी होता है, लेकिन साजिश के तहत इसके लीक होने पर नियंत्रण कठिन हो जाता है। इसकी पूछ-पड़ताल करने पर शक्की, झक्की कहा जा सकता है, समाज से लेकर अदालत तक में पीड़ित को ही जलील होना पड़ता है। अमूमन दुरुपयोग से पहले निजता के उल्लंघन का पता चलता भी नहीं, लेकिन इसके रिसाव की वजह से देर-सबेर घनघोर संकट उत्पन्न होना लाजिमी है। इसका एकमात्र उद्देश्य नितांत निजी क्षणों, अंतरंगताओं, फिजूल बातों तक की चासनी-मसाला बनाकर छीछालेदर करना होता है। यह वैध कभी नहीं रहा, पर विकृत व घटिया मानसिकता वाले यह सब सदैव करते रहे हैं। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के

आलोक में निजता के अधिकार को 'प्राइवेसी इज द राइट अगेंस्ट द स्टेट' कहा गया है, लेकिन निकटस्थ साजिशकर्ताओं, एजेंसियों, असामाजिक तत्वों की मिलीभगत से गैरसरकारी स्तर पर भी निजता का हनन होता है, जहाँ सरकार या खुफिया एजेंसियों का कहीं कोई दूर-दूर तक वास्ता नहीं होता। विशेष परिस्थितियों में निजता पर निगरानी करने हेतु विधिसम्मत तरीका पूर्वनिर्धारित है। बावजूद इसके, दुरुपयोग के लिए निगरानी स्वीकार्य तरीके से नहीं, गैरकानूनी तरीके से होती है। इसे तभी स्वीकार किया जाता है, जब वाहवाही लेनी होती है, लंबे जद्दोजहद के बाद पीड़ित पक्ष किसी न किसी रूप में फँस-उलझ गया होता है। जब वह रक्षात्मक मुद्रा में होता है, उसे पूछने की फुर्सत व हिम्मत कहाँ रहती है कि उसकी निजता किसने क्यों भंग की?

सुप्रीम कोर्ट का निर्णय 'आधार' से संबंधित डाटे के दुरुपयोग को रोकने से संबंघित मामले में आया है, लेकिन यह सैद्धांतिक स्तर काफी विस्तृत फैसला है। पहले से अनेक तरह के कार्डों के रहने के बावजूद 'आधार कार्ड' की योजना फलीभूत हुई है, जिस पर अरबों-खरबों का सरकारी धन खर्च हुआ है, अतः इसके सर्वाधिक उपयोग की संभावनाएँ तलाशने में हर्ज क्या है। सरकारी मदद सही लोगों तक पहुँचे, इसलिए मूलभूत जानकारी लेना अनुचित नहीं। सब्सिडी, फेलोशिप, छात्रवृत्ति सहित सभी सरकारी लेन-देन वाली योजनाओं के साथ गैरकानूनी लेनदेन व काले धन पर अंकुश तथा करों की चोरी रोकने के निमित्त इसका इस्तेमाल बिल्कुल सही दिशा में सही कदम है। आयकर रिटर्न, ड्राइविंग लाइसेंस, मोबाइल, पैन कार्ड, बैंक खाता आदि से इसे जोड़ना देशहित, समाजहित व जनहित में है। वास्तव में यह सब निजता के दायरे का न होकर स्वच्छ, पारदर्शी, सुरक्षित, अपराधमुक्त सुराज के लिए कारगर उपाय हैं, जिनसे मानवीय मूल्यों का संरक्षण, परिवर्द्धन और परिष्कार होता है। लेकिन इसके दुरुपयोग पर नियंत्रण का भरपूर उपाय अवश्य होना चाहिए। आजकल सीसीटीवी कैमरे के माध्यम से कितने ही अपराधी पहचाने-पकड़े जाते हैं और इस प्रकार यह आधुनिक समाज के लिए अनिवार्य-उपयोगी अंग बनता जा रहा है। निजता की आड़ लेकर शारीरिक जाँच से स्त्री-पुरुष अब कोई भी इनकार नहीं कर सकता। सामानों की स्कैनिंग, पत्र-पार्सलों की स्कैनिंग, खान-पान व निजी सामानों की जाँच जरूरी लगने पर होती ही है, जहाँ कुछ भी गोपनीय नहीं रह पाता, फिर भी राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से यह सर्वस्वीकृत है। कई जगह जेलों में सामान्य बाथरूम की दीवार एकदम नीची व बिना छत की है, ताकि भीतर कैदी आत्महत्या जैसा कुछ न कर लें, वे बाहर से दिख जाएँ। यहाँ बेशक निजता क्षरित होती है, पर इससे अपराध पर नियंत्रण लगता है, इसलिए यह आवश्यक है।

निजता मानवाधिकार ही नहीं, मूलभूत मानवीय जरूरत भी है। यह मानवीय गरिमा का आधार एवं जीवन मूल्य है, अतः निजता के साये में व्यक्ति को संतोष, स्वतंत्रता और आनंद मिलता है। निजता के मुख्य अंश अंतरंगता के स्वैच्छिक पर्दाफाश का अधिकार भी एक सीमा से अधिक किसी को नहीं, क्योंकि पार्टनर की निजता भी उसमें सम्मिलित रहती है। इसको उधेड़ने का मतलब है कि इसमें अन्य व्यक्ति को प्रवेश का मौका देना, जिससे उसे ब्लैकमेलिंग, चरित्र हनन व गलत इरादों को अंजाम देने का औजार उपलब्ध हो जाए। निजता को ग्लैमराज्ड करके भरमाने वाला दावा बाजारू नीलामी के सिवा क्या हो सकता है? आखिर प्रत्यक्ष को छोड़कर अप्रत्यक्ष को ही क्यों तरजीह देनी चाहिए? कोई दूसरे की निजता का अतिक्रमण करके अपनी निजता खोल भी दे, तो अपराध घटता नहीं, वरन् दुगुना-तिगुना हो जाता है; जैसे कोई दूसरों के यहाँ चोरी-बलात्कार करके अपने यहाँ चोरी-बलात्कार करा दे, तो अपराध डबल हो जाता है। आंतरिक आवरणहीनता और खुलापन वास्तविकता है, लेकिन उसका बाह्य प्रदर्शन क्षुद्रता, ओछापन और पाशविकता है और इस कारण अस्वीकार्य भी। 'व्यक्तिगत ही राजनीतिक है' चाहे कितना ही अत्याधुनिक विचार हो, पर अंतरंगता व निजता को चासनी-मसाला बनाकर चुस्की लेने को घटिया कृत्य ही माना जाएगा।